Vagisha International Multidisciplinary Research Journal
(International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal)
Volume-01, Issue-05, October-2026| ISSN: 3139-2776 (online)
Available online at:https://vimrj.com/
DOI: https://doi.org/10.67185/vimrj.v1i5.43

प्रेमचंद के कथा साहित्य में समतामूलक समाज

डॉ. उमेश कुमार यादव

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कुँवर सिंह पी. जी. कालेज, बलिया

e-mail : umeshyadav12690@gmail.com

Received: 09 Sepetember 2026 **| Accepted:** 16 Sepetember 2026 **| Published:** 25 October 2026

शोध–सार

प्रेमचंद आधुनिक हिन्दी साहित्य के वे शिखर पुरुष हैं, जिन्होंने साहित्य को महलों के झरोखों से निकालकर सीधे जमीन और जनसामान्य के बीच ला खड़ा किया है। उनका कथासाहित्य भारतीय समाज के शोषित, पीड़ित और उपेक्षित वर्ग की पीड़ा का सजीव हस्ताक्षर है। प्रेमचंद का समूचा साहित्य एक ऐसे समतामूलक समाज की कल्पना और उसके निर्माण के लिए किए गए संघर्ष का जीवंत दस्तावेज है, जहाँ जाति, वर्ग, लिंग और अर्थ के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव न हो। प्रेमचंद के कथासाहित्य का उद्देश्य एक ऐसे समतामूलक समाज की स्थापना करना था, जो शोषण, अन्याय, जातिवाद और वर्ग–संघर्ष से मुक्त हो। उनके उपन्यासों और कहानियों में शोषितों, पीड़ितों और उपेक्षितों की आवाज मुखर रूप से उठाई गई है। उन्होंने अपनी रचनाओं में महाजनों, जमींदारों, मिल–मालिकों और भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा किए जाने वाले अत्याचारों का पर्दाफाश किया। 'गोदान' उपन्यास में गोबर और धनिया का संघर्ष और 'कफन' कहानी में घीसू और माधव इस बात का जीवंत प्रमाण है कि कैसे आर्थिक विषमता ने मनुष्य को अमानवीय स्थिति में जीने के लिए मजबूर कर दिया। प्रेमचंद पूंजीवादी व्यवस्था के स्थान पर एक ऐसी सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था देखना चाहते थे, जहाँ मेहनतकश इंसान को उसके श्रम का पूरा सम्मान और अधिकार मिलता रहे। उनके विचार में समतामूलक समाज की कल्पना बिना जातिगत असमानता को मिटाए अधूरी है। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में ब्राह्मणवादी और रूढ़िवादी मान्यताओं पर जोरदार हमला किया है। 'ठाकुर का कुआँ' और 'सद्गति' जैसी कहानियों में उन्होंने दिखाया कि कैसे जाति व्यवस्था ने समाज को विभाजित कर रखा है और दलितों को उनके बुनियादी मानवीय अधिकारों से वंचित कर दिया है। उनका साहित्य दलितों और पिछड़ों के आत्मसम्मान की रक्षा की वकालत करता है। प्रेमचंद के कथासाहित्य में स्त्री को केवल

उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि समाज का एक स्वतंत्र और जागरूक अंग माना गया है। उन्होंने बाल विवाह, दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, और पर्दा प्रथा जैसी कुप्रथाओं का पुरजोर विरोध किया। निर्मला, सेवासदन, गबन और प्रेमा जैसे उपन्यासों में नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण करते हुए उन्होंने स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह और समाज में महिला–पुरुष की बराबरी पर जोर दिया। वे चाहते थे कि समाज के धनी और शक्तिशाली वर्ग अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझें और गरीबों के साथ समानता का व्यवहार करें।

बीज शब्द : प्रेमचंद, कथा–साहित्य, समतामूलक समाज, सामाजिक न्याय, समानता, वर्ग–संघर्ष, जाति–व्यवस्था, स्त्री–विमर्श।

मूल आलेख

प्रेमचंद हिंदी कथासाहित्य के ऐसे युगपुरुष हैं, जिनकी रचनाधर्मिता भारतीय समाज की संरचनात्मक विषमताओं के विरुद्ध संघर्ष का जीवंत साक्ष्य प्रस्तुत करती है। उनका गद्य साहित्य केवल यथार्थ का विवरण मात्र नहीं है, बल्कि वह एक न्यायपूर्ण, शोषणविहीन और समतामूलक समाज के निर्माण का एक सुविचारित सामाजिक–सांस्कृतिक और वैचारिक आधार है। प्रस्तुत शोध–पत्र प्रेमचंद के कथासाहित्य–विशेष रूप से उनके प्रमुख उपन्यासों (गोदान, रंगभूमि, कर्मभूमि, सेवासदन, गबन) तथा प्रतिनिधि कहानियों (सद्गति, ठाकुर का कुआँ, कफन, पुस की रात, दूध का दाम, मंत्र) में अभिव्यक्त समतामूलक समाज की अवधारणा का विस्तृत और बहुआयामी विश्लेषण करता है। यह अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि प्रेमचंद के यहाँ समता का अर्थ केवल राजनीतिक स्वतंत्रता या सतही सुधारवाद नहीं है बल्कि वह आर्थिक विषमता के विनाश, वर्ण–जाति व्यवस्था के उन्मूलन, लैंगिक समता, धर्मनिरपेक्ष भ्रातृत्व और मानवीय गरिमा की बहाली का बहुकोणीय समुच्चय है। गांधीवादी आदर्शवाद से अपनी साहित्यिक यात्रा शुरू करके मार्क्सवादी यथार्थवाद तक पहुँचने वाले प्रेमचंद के वैचारिक विकासक्रम को रेखांकित करते हुए, यह शोध–पत्र समकालीन संदर्भों में उनके समतावादी साहित्य की सार्वकालिक प्रासंगिकता को स्थापित करता है। हिंदी साहित्य में मुंशी प्रेमचंद का आगमन भारतीय इतिहास के उस दौर में हुआ, जब देश एक तरफ ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति का संघर्ष कर रहा था और दूसरी तरफ अंतर्निहित सामाजिक कुरीतियों, सामंती उत्पीड़न तथा आर्थिक विषमताओं से जूझ रहा था। प्रेमचंद ने यह स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक अधूरी और निरर्थक है जब तक कि समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति को सामाजिक, आर्थिक और मानवीय समता प्राप्त न हो।

प्रेमचंद ने कहा– (प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अधिवेशन का अध्यक्षीय भाषण, 1936) "साहित्यकार का काम केवल मनोरंजन करना या केवल थपकी देकर सुलाना नहीं है। वह समाज की सजग चेतना है, जो हमें जगाती है, सोचने पर मजबूर करती है और अन्याय के विरुद्ध खड़ा करती है।"[1] प्रेमचंद का कथासाहित्य भारतीय समाज की संपूर्ण संरचना का एक व्यापक और सूक्ष्म दस्तावेज है। उनके साहित्य का मुख्य लक्ष्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जहाँ मनुष्य और मनुष्य के बीच जाति, धर्म, लिंग या वर्ग के आधार पर कोई भेदभाव न हो। श्रम की प्रतिष्ठा हो और शोषक वर्ग की परजीवी मनोवृत्ति पर रोक लगे। वंचित, शोषित और उपेक्षित वर्ग को अपनी मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार मिले। प्रस्तुत शोध–पत्र का मुख्य ध्येय प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों में अभिव्यक्त समतामूलक चेतना की पड़ताल करना है। यह अध्ययन केवल साहित्यिक समीक्षा तक सीमित न रहकर समाजशास्त्रीय और वैचारिक धरातल पर प्रेमचंद के समतावादी दर्शन की विश्लेषणात्मक पड़ताल प्रस्तुत करता है। समतामूलक समाज वह सामाजिक संरचना है जहाँ समाज के सभी सदस्यों को समान अवसर, समान नागरिक अधिकार, आर्थिक न्याय और सामाजिक सम्मान प्राप्त होता है। भारतीय समाज की त्रासदी यह रही है कि यह 'वर्ण/जाति' और 'वर्ग' की दोहरी परतदार विषमता से ग्रस्त रहा है। यहाँ जन्म के आधार पर सामाजिक दर्जा तय होता था और भूमि एवं संपत्ति के स्वामित्व के आधार पर आर्थिक शक्ति केंद्रित रहती थी। प्रेमचंद अपने कथासाहित्य में इस दोहरे उत्पीड़न की परतों को खोलते है। उन्होंने देखा कि भारतीय समाज में विषमता केवल आर्थिक नहीं है, बल्कि वह धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थानों द्वारा वैधता प्राप्त सामाजिक संरचना में भी गहराई से जुड़ी हुई है। अपनी शुरुआती रचनाओं (सेवासदन, वरदान) में प्रेमचंद आर्य समाजी और पारंपरिक सुधारवादी आंदोलनों से प्रभावित थे। यहाँ वे हृदय परिवर्तन के जरिए सामाजिक समस्याओं के समाधान की उम्मीद करते हैं। सेवासदन उपन्यास में दहेज–प्रथा, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति जैसी अनेक समस्या को उजागर किया गया है। उपन्यास की नायिका 'सुमन' का विवाह गरीब गजाधर के साथ कर दिया जाता है। गरीबी और अनमेल विवाह के कारण दोनों के रिश्तों में मनमुटाव उत्पन्न हो जाता है। एक रात अपनी सहेली सुभद्रा के घर से देरी से आने की वजह से संकीर्ण मानसिकता वाले उसके पति के मन में संका उत्पन्न होती है और उसे घर से निकाल देता है। वह लांछन लगाते हुए कहता है– "चल छोकरी, मुझे न चला। ऐसे–ऐसे कितने भले आदमियों को देख चुका हूँ। वह देवता है, उन्हीं के पास जा। यह झोंपड़ी तेरे रहने योग्य नहीं है। तेरे हौसले बढ़ रहे हैं। अब तेरा गुजारा यहाँ न होगा।"[2] उपन्यास के अन्त में 'सेवासदन' की स्थापना के माध्यम से अनाथ और वेश्याओं को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर मिलता है। उस संस्था के द्वारा समाज में निचले स्तर पर खड़े व्यक्ति को मुख्यधारा

में लाकर समता लाने का प्रयास किया जाता है। 'वरदान' उपन्यास में नायक प्रतापचंद्र और नायिका विरजन के प्रेम की दुखांत कथा का वर्णन है। यह उपन्यास अनमेल विवाह और प्रेम की जटिलताओं के इर्द–गिर्द घूमता है, जो मानवीय संवेदनाओं और पारस्परिक रूढ़ियों के संघर्ष को दिखाता है। यह उपन्यास सामाजिक कुरीतियों को उजागर कर समाज सुधार की दिशा में एक सशक्त पहल करता है। रंगभूमि और कर्मभूमि के दौर में प्रेमचंद पर महात्मा गांधी के विचारों का गहरा प्रभाव दिखाई पड़ता है। 'रंगभूमि' उपन्यास ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय समाज, विशेषकर किसानों और मजदूरों पर हुए शोषण और असमानता के प्रभाव को उजागर करता है। इस उपन्यास में ब्रिटिश एवं भारतीय अमीरों द्वारा किसानों की भूमि को जबरन हड़पना है। वह भूमि, जो किसानों के आजीविका का मुख्य स्रोत होती है, औद्योगिकरण के नाम पर उससे छीन ली जाती है। यह दर्शाता है कि किस तरह से औद्योगिकीकरण के नाम पर किसानों का शोषण करते हुए उनकी ही जमीन से उन्हें बेदखल कर दिया गया है। उपन्यास में जमींदार और सामंती लोग अंग्रेजों के समर्थक है, वहीं दूसरी ओर गरीब, किसान और श्रमिक वर्ग जैसे सूरदास और उसके साथी किसान समाज के सबसे निचले तबके से आते हैं। 'रंगभूमि' का नायक अंधा 'सूरदास' अहिंसक तरीके से जमीदारों द्वारा हड़पी गयी जमीन को वापस पाने के लिए विरोध करता है। वह कहता है– "भला सोचो, कितना अँधेर है कि हम, जो सत्तर पीढ़ियों से यहाँ आबाद हैं, निकाल दिए जाएँ और दूसरे यहाँ आकर बस जाएँ। यह हमारा घर है, किसी के कहने से नहीं छोड़ सकते। जबरदस्ती जो चाहे, निकाल दे, न्याय से नहीं निकाल सकता। तुम्हारे हाथ में बल है, तुम हमें मार सकते हो। हमारे हाथ में बल होता तो हम तुम्हें मारते। यह तो कोई इनसाफ नहीं है। सरकार के हाथ में मारने का बल है, हमारे हाथ में और कोई बल नहीं है तो मर जाने का बल तो है।"[3] सूरदास का यह प्रतिरोध केवल जमीन का नहीं, बल्कि पूँजीवादी बेदखली के खिलाफ अपनी मानवीय गरिमा को बचाए रखने का संघर्ष है। 'कर्मभूमि' में 'अमरकांत' और दलितों का मंदिर–प्रवेश आंदोलन तथा भूमि सुधार आंदोलन सामाजिक समता के लिए संगठित संघर्ष की मिसाल है। प्रेमचंद के इस उपन्यास की कथा भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के उस दौर की है, जब राष्ट्र ने स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए प्राणों की बाजी लगा दी थी। 'कर्मभूमि' उपन्यास का कलेवर दो अंचल की कथाओं से मिलकर पूर्ण हुआ है– एक काशी नगर (शहर) की और दूसरी हरिद्वार के समीप स्थित गाँव की। शहर का आन्दोलन म्यूनिसिपल के खिलाफ है, गाँव का जमींदार के खिलाफ। घोर आर्थिक संकट में पड़े हुए किसान अपने जमींदार महंत को लगान की रकम नहीं दे पाते हैं। इस तथ्य को उपन्यास का नायक अमरकान्त महन्त से बताते हुए पूछता– "अगर श्रीमान कारिंदों को हुक्म दे दें कि इस वक्त असामियों को दिक न करें तो बड़ी दया हो। किसी के पास कुछ नहीं है, पर मार–गाली के

भय से बेचारे घर की चीजें बेच–बेचकर लगान चुकाते हैं। कितने ही तो इलाका छोड़–छोड़कर भागे जा रहे हैं।"[4] महन्त उससे कहता है कि मैं अपने आदमियों से कह दूँगा कि वे लगान के लिए किसानों को परेशान न करें। अमरकान्त खुश होकर महंतजी को प्रणाम करता है और बहुत तीव्र गति से अपने इलाके में पहुँचकर यह खबर सुना देना चाहता है। अब वह स्वामी आत्मानंद से पूछेगा– "कहिए, अब तो आपको विश्वास आया न कि संसार में सभी स्वार्थी नहीं, कुछ धर्मात्मा भी हैं, जो दूसरों का दुख–दर्द समझते हैं।"[5] 'कर्मभूमि' के महंत आसामियों ने जो लगानबंदी का आन्दोलन चलाया है, उसके साथ भी सरकार का प्रत्यक्ष संबंध तो नहीं है किन्तु उसमें सरकार कहीं न कहीं आ ही जाती है। किसानों की मांग है कि भयानक मंदी को देखते हुए लगान में छूट दी जाए। महंत ने अमरकान्त को बताया है कि सरकार उनकी जितनी मालगुजारी छोड़ देगी, वह भी किसानों को उतनी ही लगान छोड़ देगा।

'गोदान' प्रेमचंद का सबसे लोकप्रिय और कालजयी उपन्यास है, जिसे किसानों का महाकाव्य भी कहा जाता है। इस उपन्यास में उन्होंने भारतीय समाज, विशेषकर ग्रामीण जीवन और किसानों की समस्याओं का गहराई से चित्रण किया है। जब भारत में जमींदारी प्रथा थी, तब किसान उसके शिकंजे में फंसा हुआ था। जमींदार, कारकुन, पटवारी, सूदखोर, महाजन आदि उसका शोषण करते ही हैं, इनके आलावा पुलिस, व्यापारी, धर्म के ठेकेदार भी उसका शोषण करते हैं। यह कैसी विडंबना, कैसा विरोधाभास है कि जो किसान सारे विश्व के लिए अन्न उत्पन्न करता है, वही खुद भूखा है, उसकी स्थिति ऐसी हो जाती है कि किसी–किसी दिन उसे अन्न का एक दाना तक मयस्सर नहीं होता। यह भी विडंबना ही है कि अपने शोषकों के बारे में होरी जैसा किसान अच्छी तरह जानता है, फिर भी, रूढ़ियों और संस्कारों से बंधा हुआ होने के कारण वह उनके प्रति क्रोधित नहीं हो पाता, इस शोषण के लिए वह अपने भाग्य को ही दोषी मानता है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि होरी के ऐसा मानने के बावजूद, उसका पुत्र 'गोबर' अपने पिता की इस अवधारणा से सहमत नहीं है। वह इस बात को जानता है कि "भगवान तो सबको बराबर बनाता है। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।"[6] किसानों के इस शोषण का कारण है उनके संस्कार, रूढ़िवाद और संगठन का अभाव। वे एक–दूसरे से ईर्ष्या करते हैं और इसलिए बैलों की तरह जमींदारों के हल में जुते रहते हैं।

इस उपन्यास में प्रेमचंद का प्रयास जमींदार और किसानों के आंतरिक, भावात्मक और वैचारिक जीवन का चित्रण करना रहा है। गोबर के व्यक्तित्व में वह कहीं–कहीं अंकुरित भी होता है। वह कहता है, "दादा का ही कलेजा है यह सब कुछ सहते हैं, मुझसे तो एक दिन न सहा जाए।"[7] इससे जाहिर

है कि युवा किसान कहीं न कहीं अपनी परिस्थितियों की असलियत समझ रहा है और उन्हें क्या करना चाहिए, यह भी समझ रहा है। किसान कितना भी जी–तोड परिश्रम करे। उस पर किसी को दया नही आती है। प्रेमचंद लिखते हैं– "किसान खेत में मरता है, तो किसी को दया नहीं आती पर महाजन के घर का कुत्ता भी बीमार हो जाए, तो सब हाल पूछने पहुँचते हैं।"[8] होरी की आकांक्षा कोई अपार धन–दौलत कमाने की नहीं है उसकी सीधी–सी चाहत है– एक गाय रखना, अपने खेत बचाना और सम्मान से जीना। परंतु महाजनी सभ्यता का दुष्चक्र उसे खेत खोकर अंततः मजदूर (सर्वहारा) बनने पर मजबूर कर देता है। होरी की मृत्यु कोई व्यक्तिगत त्रासदी नहीं है यह एक ऐसा सामाजिक हत्याकांड है, जो विषमतावादी आर्थिक ढाँचे द्वारा रचा गया।

'सद्गति' कहानी भारतीय साहित्य में जातिगत उत्पीड़न की सबसे त्रासद कहानियों में से एक है। दुखी चमार पंडित घासीराम के घर अपनी बेटी की शादी के लिए शुभ मुहूर्त विचरवाने जाता है। पंडित उससे कहता है काम सही से करो तभी साइत ठीक से विचारूंगा। पंडित दुखिया से दिनभर बिना कुछ खिलाये–पिलाये लकड़ी कटवाता है। दुखिया अच्छी साइत के लिए पूरी ईमानदारी से पंडित का काम करता है। प्रेमचंद लिखते हैं– "दुखी का जी डूबा जाता था, पर दिल को समझाकर उठा। पंडित हैं, कहीं साइत ठीक न बेचारे, तो फिर सत्यानाश ही हो जाए। तभी तो संसार में इनका इतना मान है। साइत ही का तो सब खेल है। जिसे चाहे बिगाड़ दें।"9 पंडित की अच्छी साइत के लिए भूख–प्यास से व्याकुल दुखी लकड़ी काटते–काटते दम तोड़ देता है। प्रेमचंद ने इस कहानी में धर्म और जाति के नाम पर अमानवीय शोषण का कड़ा पर्दाफाश किया है। प्रेमचंद इस कहानी के माध्यम से संकेत करते हैं कि जब तक समाज से जातिगत अहंकार और शोषण खत्म नहीं होता, तब तक एक समतामूलक और न्यायप्रिय समाज की कल्पना नही की जा सकती। यह कहानी भविष्य में समतामूलक समाज के निर्माण के लिए प्रेरित करती है। जहाँ हर व्यक्ति को बराबरी का अधिकार मिले।

प्रेमचंद ने 'पूस की रात' कहानी में 'हल्कू' के माध्यम से पूरे कृषक समाज की गरीबी, बेबसी एवं विडम्बनापूर्ण जीवन का मार्मिक एवं यथार्थपूर्ण चित्रण किया है। इस कहानी में किसान 'हल्कू' अपनी फसल को ठिठुरती ठंड में नीलगायों से नहीं बचा पाता, क्योंकि उसके पास एक कंबल खरीदने के रुपये नहीं है चूँकि उसने रुपये महाजन सहना को दे दिए। पत्नी द्वारा फसल तबाह होने की सूचना पाकर वह राहत की साँस लेता है कि "अब रात को ठंड में यहाँ सोना तो नहीं पड़ेगा।"[10] यह बड़ी विडंबना है कि मेहनत करने वाला किसान अपनी ही जमीन से बेदखल होकर मजदूरी को बेहतर समझता है।

ईदगाह कहानी में नन्हा हामिद अपने दोस्तों के साथ मेला देखने जाता है। यहाँ से वह अपनी बूढ़ी दादी के लिए एक चिमटा खरीदकर लाता है। अमीना हामिद से पूछती है, यह चिमटा क्यों लाया? तुम्हारी अंगुलियाँ तवे से जल जाती हैं। प्रेमचंद लिखते हैं– "बुढ़िया का क्रोध तुरंत स्नेह में बदल गया और स्नेह भी वह नहीं जो प्रगल्भ होता है और अपनी सारी कसक शब्दों में बिखेर देता है, यह मूक स्नेह था, खूब ठोस, रस और स्वाद से भरा हुआ। बच्चे में कितना त्याग कितना सद्भाव और कितना विवेक है, दूसरों को खिलौने लेते और मिठाइयाँ खाते देखकर उसका मन कितना ललचाया होगा? इतना जब्त इससे हुआ कैसे? वहां भी उसे अपनी बूढ़ी दादी की याद बनी रही। अमीना का मन गदगद हो गया।"[11] यह कहानी बालक हामिद और उसकी दादी अमीना के केवल गरीबी और वात्सल्य की नहीं है बल्कि यह धर्म से परे मानवीय संवेदना, त्याग और आत्मीयता का सुंदर दस्तावेज भी है।

'पंच–परमेश्वर' कहानी जुम्मन शेख और अलगू चौधरी के मित्रता प्रेम, त्याग और परोपकार की कहानी है। इस कहनी में जब जुम्मन शेख अपनी खाला की सेवा नही करता है तो बूढ़ी खाला पंचायत बुलाने का निर्णय लेती है लेकिन पंच बनने को कोई तैयार नहीं है। खाला थक–हारकर अलगू चौधरी से कहती है "बेटा, क्या बिगाड़ के डर से ईमान की बात न कहोगे?"[12] किसी से विवाद होने की डर से ईमानदारी की बात नहीं करोगे। कहानी पंच–परमेश्वर में कुछ समय के बाद जब जुमन शेख को पंच बनाया जाता है, तब वह कहता है– न्याय करना मनुष्य का काम नहीं है। "पंच के दिल में खुदा बसता है। पंच के सामने न कोई अपना होता है, न पराया।"[13] यह उक्ति न्याय की निष्पक्षता और मानवीय समता का सर्वोत्तम प्रमाण है।

'कफन' प्रेमचंद की सबसे महत्वपूर्ण कहानियों में से एक है। घीसू और माधव की अकर्मण्यता और संवेदनहीनता असल में उस क्रूर आर्थिक ढाँचे की उपज है जहाँ दिन–रात काम करने वाले किसान–मजदूर भी भूखे मरते हैं। जब इंसान को महसूस होता है कि हाड–तोड मेहनत करने का फल भी केवल भुखमरी है तो उसके अंदर का नैतिक विवेक एवं संवेदनाएँ मर जाती है। प्रेमचंद लिखते हैं– "जिस समाज में रात–दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से कुछ बहुत अच्छी न थी और किसानों के मुकाबले वे लोग, जो किसानों की दुर्बलता से लाभ उठाना चाहते थे, कहीं ज्यादा संपन्न थे। वहां इस तरह की मनोवृत्ति का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी।"[14] कैसा खराब प्रचलन है कि जिसे जीते जी तन ढाँकने के लिए एक चीथड़ा भी न नसीब हुआ, उसे मरने के बाद नया कफन चाहिए। बुधिया की मृत्यु के बाद घीसू और माधव पूरे गांव से कफन के लिए पैसा मांगते हैं। पैसा मिलने के बाद, वह दोनों कफन खरीदने के लिए बाजार निकल जाते हैं। यहाँ पर वे कफन

के पैसे से शराब और पूड़ियां खाते है, जो अमानवीय सामाजिक व्यवस्था पर परोक्ष रूप से करारा प्रहार है।

एक समतामूलक समाज के लिए धर्मनिरपेक्षता और सांप्रदायिक सौहार्द अपरिहार्य शर्त हैं। प्रेमचंद ने अपने पूरे जीवन में धार्मिक कट्टरता, अंधविश्वास और धर्म के नाम पर इंसान को बाँटने वाली शक्तियों का तीखा विरोध किया। जो पुरोहितों, पंडे–पुजारियों और मौलवियों द्वारा आम जनता का शोषण करने का जरिया बनता हैं।

निष्कर्ष

प्रेमचंद समतामूलक समाज के विषय में अपना विचार व्यक्त करते हैं। जहाँ उत्पादन के साधनों पर केवल पूँजीपतियों या जमींदारों का अधिकार न हो, बल्कि श्रम करने वाले किसान और मजदूर को उसके पसीने का वाजिब हक मिलता हो। जहाँ वर्ण और जाति के आधार पर अछूतपन या श्रेष्ठता–हीनता का भाव न हो मनुष्य की पहचान उसके जन्म से नहीं बल्कि उसके चरित्र और कर्म से हो।

आज 21वीं सदी में भी जब हम प्रेमचंद की रचनाओं को पढ़ते हैं, तो लगता है कि वे हमारे आज के समय से संवाद कर रहे हैं: आज भी किसान की आत्महत्याएँ होरी और हल्कू की त्रासदी का ही आधुनिक विस्तार हैं। जातिगत भेदभाव और हिंसा के मामले आज भी 'सद्गति' और 'ठाकुर का कुआँ' की याद दिलाते हैं। सांप्रदायिक ध्रुवीकरण के दौर में प्रेमचंद का धर्मनिरपेक्ष भ्रातृत्व का संदेश पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक और जरूरी हो गया है। प्रेमचंद का कथासाहित्य भारतीय समाज को समता, न्याय, स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा के पथ पर आगे बढ़ाने वाला एक विचार–पुंज है। जब तक दुनिया में किसी भी रूप में शोषण, विषमता और अमानवीयता रहेगी, तब तक प्रेमचंद का समतावादी विजन प्रासंगिक और प्रेरणादायी बना रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, रामविलास, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. प्रेमचंद, सेवासदन प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, अठारहवाँ संस्करण, पृष्ठ–244
3. प्रेमचंद रंगभूमि, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली अठारहवाँ संस्करण, पृष्ठ–457
4. प्रेमचंद, कर्मभूमि, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, अठारहवाँ संस्करण, पृष्ठ–253
5. वही, पृष्ठ–253

6. प्रेमचंद, गोदान, प्रयाग पुस्तक सदन, विश्वविद्यालय रोड, इलाहाबाद, संस्करण 2003 पृष्ठ–15
7. वही, पृष्ठ–160
8. वही, पृष्ठ–240
9. प्रेमचंद, प्रतिनिधि कहानियाँ (सद्गति), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, अठारहवाँ संस्करण 2023, पृष्ठ–132
10. पूस की रात, वही, पृष्ठ–55
11. ईदगाह, वही, पृष्ठ–48
12. पंच–परमेश्वर, वही, पृष्ठ–137
13. वही, पृष्ठ–146
14. कफन, वही, पृष्ठ–153